जुलाई 2024, अंक 9

cinemahaul

सिनेमाहौल

फ़िल्म ईज़ीन

अतिथि संपादक

गीताश्री

साहित्यकारों का सिनेमा

डॉ. रीतामणि वैश्य, वंदना बाजपेयी, शिखा वार्ष्णेय, निधि अग्रवाल, निवेदिता, पंकज सुबीर, प्रियंका ओम, यतीश कुमार, सुधा उपाध्याय, द्वारिका अग्रवाल, वीणा वत्सल सिंह, प्रज्ञा, सुषमा गुप्ता, आकाश माथुर, सन्दीप तोमर, सुलोचना, पारुल सिंह, अणु शक्ति सिंह, जमुना बिनी, कंचन जायसवाल, अमिताभ रंजन कानू, रेणु मिश्रा, केतन यादव, अरुण कुमार, अंजू खरबंदा, निर्मला भुराड़िया, जोशना बनर्जी, डॉ. भूपेंद्र बिष्ट, मृदुला शुक्ला, रुचि भल्ला, डॉ. रक्षा गीता, रश्मि रविजा, निर्देश निधि, अनघ शर्मा, संतोष श्रीवास्तव, शरद कोकास, अनुराधा ओस, आशीष कुमार, नीलिमा शर्मा, जावेद आलम ख़ान, जयंती रंगनाथन, निखिल आनंद गिरि

आवरण: आर वर्क

जुलाई, 2024

अंक 9

सिनेमाहौल

फ़िल्मी ईज़ीन

अतिथि संपादक

गीताश्री

कवर डिज़ाइन: रविराज पटेल

अनुक्रम

लापता लेडीज: गुमनाम स्त्रियों का पता बताती 15

डॉ॰ रीतामणि वैश्य

पगलैट: मृत्यु की खोह से जिंदगी की शुरुआत 19

वंदना बाजपेयी

म्यूजिक टीचर: हकीकत और भावनाओं की टकराहट 26

शिखा वार्ष्णेय

क़ला: मीठे ज़हर का झरना 32

निधि अग्रवाल

चमकीला : दोहरे मेयार रखने वाले समाज में हलचल 42

निवेदिता

कटहल : दर्शक को अपने साथ जोड़े रखती है 47

पंकज सुबीर

क़ला : एक कलाकृति 52

प्रियंका ओम

श्रीकान्त : मुझे भागना नहीं आता 58

यतीश कुमार

लापता लेडीज़: शेडी सयानी लेडीज़ का पता पूछती 70

सुधा उपाध्याय

3 इडियट्स: वर्त्तमान शिक्षा प्रणाली की खाल उधेड़ती फिल्म 78

द्वारिका अग्रवाल

रॉकी और रानी की प्रेम कहानी : पितृसत्ता की पारंपरिक सोच पर प्रहार करती फिल्म 84

वीणा वत्सल सिंह

लंच बॉक्स: विरोधी दुनियाओं में लय सरीखी 89

प्रज्ञा

द सॉन्ग ऑफ़ स्कॉर्पीअन्स: प्रेम, क्षमा और करुणा के चरम की दास्तान है 94

सुषमा गुप्ता

रेनकोट: प्रेम को परिभाषित करती फ़िल्म 100

आकाश माथुर

लज्जा : भारत में महिलाओं की दुर्दशा को आइना दिखाती फिल्म 105

सन्दीप तोमर

द थ्रेसहोल्ड: क्यूंकि सहने की सीमा होती है 113

सुलोचना

डोर: स्त्रियों की दोस्ती से महकती 119

पारूल सिंह

अस्तित्व : स्त्री-विमर्श नहीं जानती थी पर अपने लिए 'बोलना' सीख गई! 126

अणु शक्ति सिंह

रंग दे बसंती: कड़वे सच को शिद्दत से उठाती फ़िल्म 132

जमुना बीनी

थ्री ऑफ अस: यादों की टूटती गिरहें 138

कंचन जायसवाल

निल बटे सन्नाटा: इंसान को नष्ट किया जा सकता है लेकिन हराया नहीं जा सकता 144

अमिताभ रंजन कानू

तमाशा: जीवन का ताना-बाना है फ़िल्म 154

रेणु मिश्रा

डियर जिंदगी: ताजी खुली हवा की खिड़की है 159

केतन यादव

माई नेम इज खान: एक साधारण आदमी की असाधारण कथा 164

अरुण कुमार

दो दूनी चार: ताजी हवा का ठंडा झोंका 171

अंजू खरबंदा

राजी 177

निर्मला भुराड़िया

मीनाक्षी ए टेल ऑफ थ्री सीटिस: अंतहीन जादू की तरह बांध लेती है 182

जोशना बैनर्जी

लाल सिंह चड्ढा: अतीत की ऐसी यादें, जो आगे ही बढ़ाती रही 189

डॉ. भूपेंद्र बिष्ट

तारे जमीं पर: खो न जाएं ये कहीं 196

मृदुला शुक्ला

यात्रा 205

रुचि भल्ला

कोबाल्ट ब्लू: प्रेम रंग में डूबी दुखा:त्मक नीलिमा 211

डॉ. रक्षा गीता

सिर्फ एक ही बंदा काफी है 219

रश्मि रविजा

'परीक्षा': अपराध की माँद में फिसलता एक सपना 226

निर्देश निधि

वॉटर : सतह पर हकीकत की काई 233

संतोष श्रीवास्तव

महाराज: उपन्यास की तरह पढ़ी जाने वाली फिल्म 240

शरद कोकास

दंगल: मुठ्ठी भर सपने, इरादे और संघर्ष की कहानी है 251

अनुराधा ओस

मार्गरीटा विद ए स्ट्रॉ: जिंदगी मुख्तसर मिली थी हमें, हसरतें बेशुमार ले के चलें 257

आशीष कुमार

जब वी मेट 261

नीलिमा शर्मा

दिल धड़कने दो: अपनी धड़कनों को सुनने की ज़िद !! 271

अनघ शर्मा

तुम्बाड़ और हस्तर की रहस्यमई कहानी 278

जावेद आलम ख़ान

गैंग्स ऑफ वासेपुर: इश्क उस स्याह दुनिया से 288

जयंती रंगनाथन

सरल, सहज प्रेम और प्रतिरोध का स्वर है चौरंगा 295

निखिल आनंद गिरि

मेरी बात

मैं अभी यूरोप की यात्रा में हूं। इस यात्रा की वजह से मैं स्वयं सिनेमाहौल फ़िल्म ईज़ीन का जुलाई अंक संकलित और संपादित करने की स्थिति में नहीं था। आप सभी पाठकों का स्नेह और विश्वास इतना सघन है कि मैं इसका क्रम भी नहीं तोड़ना चाहता था। इच्छा यही रही कि ईज़ीन हर महीने आपके पास पहुंचती रहे। समस्या थी की निरंतरता कैसे बनी रहे?

इसी उधेड़बुन में एक पुराना इरादा जाग उठा। मैं हमेशा सोचता रहा हूं कि अभिव्यक्ति के सभी माध्यमों में सक्रिय रचनाकर्मी फिल्मों के बारे में लिखें। हिंदी फिल्मों का भारतीय सौंदर्य शास्त्र अभी तक विकसित और सुनिश्चित नहीं हो पाया है। ऐसे में अगर विभिन्न माध्यमों के रचनाकर्मी फिल्मों के बारे में लिखेंगे तो वे दर्शकों और पाठकों को फिल्म देखने की एक अलग सौंदर्यदृष्टि देंगे। किसी एक माध्यम का रचनाकार दूसरे माध्यम की अभिव्यक्तियों की बारीकियां को पूरी संवेदना के साथ समझ पाता है। खासकर साहित्यकार इस दिशा में अत्यंत सहायक हो सकते हैं। साहित्यकारों से मिलने पर मेरी जिज्ञासा रहती है कि मैं उनकी पसंद की फिल्मों के बारे में जान सकूं। इसी सोच के तहत साहित्यकारों के सिनेमा पर अंक निकालने का विचार आया।

मैंने पुरानी मित्र और साहित्यकार गीताश्री से 'साहित्यकारों का सिनेमा' का अंक निकालने के संबंध में विमर्श किया और उनसे पूछा कि क्या वह यह जिम्मेदारी संभाल लेंगी? उन्होंने सहर्ष सहमति दी और तत्काल इस कार्य में जुट गईं। अपनी व्यस्तता के साथ उन्होंने इस जिम्मेदारी को सफल तरीके से निभाया। उन्होंने 36 साहित्यकारों से इस अंक के लिए लेख लिखवा लिया। निश्चित ही यह आसान काम नहीं रहा होगा।

हमने सिफारिश की थी कि 21वीं सदी के हिंदी सिनेमा पर ही सभी लिखें। इस अंक से गुजरते हुए आप महसूस करेंगे कि साहित्यकारों ने इन फिल्मों को समझने की थोड़ी अलग कुंजी दी है।

अब ईज़ीन आपके स्क्रीन पर है। आप अपनी राय अवश्य लिखें।

अंत में गीताश्री को इस महत्वपूर्ण जिम्मेदारी को उल्लेखनीय तरीके से निभाने के लिए धन्यवाद कहूंगा। साथ ही नॉटनल के नीलाभ श्रीवास्तव और गरिमा सिन्हा की मेहनत और समर्पण को याद करूंगा।

फिल्में देखें, फिल्में पढ़ें और फिल्मों पर लिखें।

अजय ब्रह्मात्मज

जुलाई 2024

हेलसिंकी (फिनलैंड)

cinemahaul@gmail.com

भूमिका

साहित्यकारों का सिनेमा

साहित्यकारों का सिनेमा विशेषांक तैयार है। यह विलक्षण आयडिया सिनेमाहौल फ़िल्म ईज़ीन के संपादक अजय ब्रह्मात्मज जी का है। मित्रता के कारण उन्होंने मुझे इस अंक के संपादन का काम सौंपा। पहले मुझे असंभव लगा और मैं फ़ेसबुक पर विलाप कर बैठी। मुझे हमेशा से लगता रहा है कि साहित्यकार नामक प्राणि से कुछ भी समयावधि में लिखवाना असंभव होता है। मैं पहले भी साहित्य विशेषांक निकाल चुकी हूँ। मेरा पूर्वानुभव ऐसा ही रहा है।

धारणाएँ टूट जाती हैं। उन्हें टूट जाना ही चाहिए। तभी कुछ सुंदर चीजें घटित होती हैं। एक नयी धारणा आकार लेती है।

यह विशेषांक मेरी नज़र में एक सुघटना की तरह है, जो मेरी पूर्व धारणाओं को खंडित करके एक नया विश्वास, एक नयी छवि गढ़ सकी है।

मैं लंबे समय बाद इतनी रचनात्मक सुख का अनुभव कर रही हूँ। मेरे आग्रह और मनुहार पर साहित्यिक मित्रों, वरिष्ठों और अनुजवत भाइयों-बहनों ने अपनी पसंद की एक फिल्म पर लिखा।

21वीं शताब्दी का मौजूदा कालखंड लंबा है। इन चौबीस सालों में अनगिन फ़िल्मों के बीच पसंद की एक फिल्म चुनना कठिन तो रहा होगा।

एक आँकड़े के अनुसार भारत में हर साल लगभग सभी भारतीय भाषाओं में दो हज़ार फ़ीचर फ़िल्में बनती हैं।

यह दुनिया में किसी अन्य देश से बहुत अधिक हैं। इनमें से करीब 35 प्रतिशत थिएटरों में लगती हैं। बाकी टेलीविजन या ऑनलाइन रिलीज होती हैं।

इस सदी में तो हथेली पर सिनेमा आ चुका है।

हर हाथ में मोबाइल है और हर मोबाइल एक चलता-फिरता सिनेमा हॉल है।

***

मैं घनघोर सिनेप्रेमी हूँ। व्यवहार और सोच दोनों में इतनी फ़िल्मी हूँ कि पूरा जीवन रेत होने से बच गया।

सच कहूँ तो आँख खोलते ही सिनेमा मिला था। साहित्य उसके बाद। कानों में लोरी की आवाज़ नहीं आई थी, रेडियो पर बजने वाले नग़मों ने मेरा मन बहलाया और फिर सिनेमाघरों तक परिवार ने पहुँचाया। सबके सब सिनेमा प्रेमी निकले। छोटे क़स्बों और गाँवों में मन बहलाव का कोई साधन कहाँ था तब! शहरों में जाना पड़ता था। फिर जब शहर में रहने लगे तो सिनेमा अपने आसपास ही रहा और हम उसके आसपास रहे।

चाहे होस्टल की बंदिशों में क्यों न रही... वार्डन को पटा कर पूरा सेक्शन हर महीने एक फ़िल्म देखने सिनेमा हॉल में पहुँचता ही था। उसके अलावा वीडियो थियेटर हर सप्ताह हम होस्टल में मंगा कर देखने के आदी हो चुके थे।

सिनेमा एक लत की तरह तब भी थी, अब भी है।

ऋत्विक घटक ने सिनेमा देखने जाने को संस्कार से जोड़ कर देखा है। यही वजह है कि सिनेमा हावी है मुझ पर। गहरा असर जिसने मुझे बदल दिया, जिसने मुझे बचाया और जिसने दृष्टि दी।

अब हॉल में जाने की आदत कम हुई तो हथेली पर सिनेमा संसार धड़कने लगा है।

आज सिनेमा मेरे दैनिक जीवन की आवश्यकता बन चुका है जो मेरे रेगिस्तान बन रहे जीवन को सींचता है, आहत मन को सहलाता है। आँखों में उम्मीदों के स्वप्न भर देता है।

कोई भी कला, जितनी देर हमारे साथ रहती है, हम उतनी देर सारे संघर्ष और त्रासदियों को भूले रहते हैं।

सिनेमा उनमें सबसे पावरफ़ुल है। उसकी ताक़त का अहसास हमेशा होता रहा है।

***